International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197
Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 1146-1147

कबीर का जीवन–दर्शन

डॉ. पूनम काजल
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, जींद, हरियाणा, भारत।

सारांश
कबीरदास मध्यकालीन निर्गुण साहित्य के देदीप्यमान नक्षत्र हैं, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है। तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक व्यवस्था से असन्तुष्ट होकर उन्होंने अत्यन्त निर्भीकतापूर्वक तत्कालीन जड़ सामाजिक व धार्मिक परम्पराओं के उन्मूलन का स्तुत्य प्रयास किया। निःसन्देह उनकी वाणी सामाजिक व आध्यात्मिक मूल्यों की संवाहक है। उनकी गणना उत्तर भारत के भक्ति आन्दोलन के अग्रणी कवियों में की जाती है। वे एक ऐसे युगचेता कवि थे, जिन्होंने वर्णाश्रम व्यवस्था की अंधविश्वासपूर्ण तर्कहीनता को अनावृत्त कर समाज का पथ–प्रदर्शन किया। उन्होंने अपने अदम्य साहस का परिचय देते हुए तत्कालीन मिथ्या रूढ़ियों व धार्मिक व्यवस्थाओं पर तीव्र प्रहार किए। वे निराश हिन्दू जनता के लिए आशा की ज्योति लेकर आए। सही अर्थों में वे सर्वहितकारी, मानवतावादी व परम समदर्शी सन्त थे।

मुख्य शब्द : अनावृत्त, धर्मोपासना, कर्माधारित, तर्कहीनता

प्रस्तावना

'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः' की दार्शनिक विचारधारा रखने वाले कबीर का समूचा दर्शन मानवता को समर्पित था। अपनी प्रखर वाणी के कारण समूचे भक्तिकाल में अपनी एक विशिष्ट पहचान रखने वाले कबीर ऊँच–नीच की कलुषित भावना से रहित वर्ग विहीन समाज के निर्माण के अभिलाषी थे –

"एक बूंद एकै मल मूतर, एक चाम एक गूदा।
एक ज्योति थैं सब उत्तपना, कौन बाँमन कौन सूदा।" [1]

मानव विरोधी समूची सामाजिक व्यवस्था का तिरस्कार करते हुए उन्होंने व्यक्ति तथा समाज के उत्कर्ष की मंगल कामना की। निश्चय ही वे आधुनिक युग के समाज सुधारकों के अग्रदूत व पथ–प्रदर्शक थे। कबीर के सन्दर्भ में डॉ. प्रकाशचन्द्र गुप्त के विचार अत्यन्त सटीक प्रतीत होते हैं – "सामाजिक शोषण, अनाचार व अन्याय के विरुद्ध संघर्ष में आज भी कबीर का काव्य तीखा अस्त्र है। कबीर से हम रूढ़िगत सामन्ती दुराचार और अन्यायी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध डटकर लड़ना सीखते हैं और यह भी सीखते हैं कि विद्रोही कवि किस प्रकार अन्त तक शोषण के दुर्ग के सामने अपना माथा ऊँचा रखता है।"[2]

प्राचीन युगीन भारतीय समाज का वर्गीकरण कर्माधारित था, परन्तु कालान्तर में मध्यकाल तक आते–आते हमारी सामाजिक व्यवस्था संकीर्ण जातिगत भेदभावों के सामाजिक विकारों से ग्रस्त हो चली थी। कबीर ने जन्म आधारित इस जाति प्रथा का घोर विरोध किया। उनकी वाणी में धर्मोपासना की उन समस्त पद्धतियों का विरोध है जो आदमी–आदमी के बीच खाई पैदा करती हैं। उनकी दृष्टि में मानव धर्म ही सर्वोच्च है। 'ना हिन्दू ना मुसलमान' कह कर मानव धर्म की संस्थापना करते प्रतीत होते हैं। कबीर के मतानुसार समाज के कतिपय ठेकेदारों ने अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु वर्ग–भेद को जन्म दिया है। ब्राह्मणों को खुली चुनौती देते हुए उनके मिथ्या ब्राह्मणवाद पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं –

"जो तू ब्राह्मण ब्राह्मणी जाया
तऊ आन वाट काहे नहीं आया।" [3]

कबीर मूर्ति–पूजा, जप–माला, तिलक आदि कर्मकाण्डों के सर्वथा विरुद्ध थे। जहाँ एक ओर हिन्दुओं के तीर्थ–यात्रा, तिलक का विरोध करते हैं, वहीं दूसरी ओर मुसलमानों के रोज़ा, नमाज़ का। वे अपनी वाणी के द्वारा सदैव सामाजिक समन्वय पर बल देते रहे। सामाजिक–धार्मिक पाखाण्डों को उखाड़ने की प्रबल आकांक्षा उनके काव्य में सहज ही देखी जा सकती है। कहीं कबीर 'ना मैं देवल, ना मैं मस्जिद, ना काबे कैलास में' कह कर तीर्थ–यात्रा का खंडन करते हैं, तो कहीं 'पाहन पूजै हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहार' कह कर मूर्ति पूजा का। कबीर एकेश्वरवाद के भी प्रबल समर्थक रहे हैं। उनके विचारानुसार एक ही तत्व घट–घट में व्याप्त है –

"एकहि जोत सकल घट व्यापक, दूजा तत्त न होई।
कहै कबीर सुनौ रे संतो, भटकि मरै जनि कोई।।" [4]

कबीर ने समाज को सन्मार्ग पर लाने हेतु नवीन और लोक कल्याणकरी मार्ग अपनाया। उनके विचारों में अनेक मतों, सम्प्रदायों व महात्माओं के विचारों का अद्भुत सम्मिश्रण है। बुराइयों को दूर कर वे शुद्ध आचरण, सात्विकता व सामाजिक समन्वय पर बल देते थे। ऊँच–नीच को सामाजिक अभिशाप घोषित करने वाले कबीर का आक्रोश निम्न पंक्तियों में सहज ही देखा जा सकता है। आचरण की पवित्रता व नैतिक मूल्यों के समर्थक कबीर समाज को सचेत करते हुए कहते हैं –

"हिन्दू आपन करै बड़ाई, गागर छुअन न देई
वेश्या के पायन तर सोवे, यह देखो हिन्दुवाई।" [5]

कबीर के मतानुसार मनुष्य मात्र में उदात्त मूल्यों का होना परम आवश्यक है। 'कबीर सोई पीर है, जो जानै पर पीर' कह कर परोपकार का संदेश देते हैं। उन्होंने अपनी वाणी द्वारा माया, लोभ, ऊँच–नीच, वर्ण–व्यवस्था तथा अन्य सभी सामाजिक–धार्मिक विषमताओं पर तीखे प्रहार किए हैं। उन्होंने पाखंड, अंधविश्वास, लिंग–भेद, पूजा–पाठ आदि सभी कुरीतियों को रेखांकित कर समाज को सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया है। जीवन की क्षण भंगुरता व संसार की नश्वरता को रेखांकित कर, कबीर मानव मात्र को सचेत करते है। वे नैतिक मूल्यों के ऐसे पक्षधर थे, जो जनता

के सच्चे पथ–प्रदर्शक कहे जा सकते हैं। निःसन्देह उनकी वाणी उस समय भी प्रासंगिक थी, वर्तमान में भी है और आगे भी रहेगी। 'वे एक उज्ज्वल भविष्यदृष्टा के रूप में समाज सुधारक थे। सामाजिक पाखण्डों और चिरकाल से व्याप्त रूढ़ियों पर उन्होंने अपनी प्रभावपूर्ण वाणी से तीक्ष्ण प्रहार किए हैं।'[6]

उद्देश्य

निश्चय ही आधुनिक युगीन परिस्थितियां कबीर युगीन परिस्थितियों से कम जटिल नहीं हैं। वर्ण–भेद, साम्प्रदायिकता, पाखंड, हिंसा जैसी विरोधी शक्तियाँ आज भी सक्रिय हैं। तत्कालीन युग में कबीर ने अपनी वाणी द्वारा सामाजिक–धार्मिक विकृतियों को जड़मूल से उखाड़ फेंकने का बीड़ा उठाया तथा सामाजिक भेद–भाव की दीवार को गिरा कर हिन्दू–मुस्लिम में एकता लाने का प्रयास किया। कबीर के विचार वर्तमान युग में भी उतने ही सार्थक हैं, जितने तत्कालीन युग में थे। वर्तमान समय में कबीर की प्रासंगिता को उद्घाटित करते हुए सरदार जाफरी का कथन द्रष्टव्य है – "हमें आज भी कबीर के नेतृत्व की ज़रूरत है, उस रोशनी की ज़रूरत है जो इस सन्त के दिल में पैदा हुई थी। आज दुनिया आज़ाद हो रही है। विज्ञान की असाधारण प्रगति ने मनुष्य का प्रभुत्व बढ़ा दिया है। उद्योगों ने उसके बाहुबल में वृद्धि कर दी है, मनुष्य सितारों पर कमंदे फेंक रहा है। फिर भी वह तुच्छ है, संकटग्रस्त है, दुखी है। वह रंगों में बंटा हुआ है, जातियों में विभाजित है। उसके बीच धर्मों की दीवारें खड़ी हुई हैं, साम्प्रदायिक द्वेष है, वर्ग–संघर्ष की तलवारें खिंची हुई हैं।"[7]

उपसंहार

अनेक धर्मों व जातियों में बंटा हुआ वर्तमान भारतीय समाज निश्चय ही संकट की स्थिति में है। ऐसी विकट स्थिति में कबीर का साहित्य प्रासंगिक हो जाता है, क्योंकि मध्ययुगीन समाज की जिन चुनौतियों का सामना करते हुए उन्होंने एक समाज सुधारक व युग चेता मार्गदर्शक की भूमिका निभाई थी, आज भी हमारा समाज कुछ–कुछ वैसी ही जटिलताओं से घिरा हुआ है। शताब्दियों पूर्व कबीर ने जिस भावनात्मक एकता के लिए जाति व धर्मविहीन मानवता की कामना की थी, वही कामना आज हमारी राष्ट्रीय कामना है। वास्तव में कबीर की वाणी साम्प्रदायिक सद्भाव से परिपूर्ण होने के कारण समूचे विश्व का पथ–प्रदर्शन कर रही है। व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के उत्थान हेतु उनका योगदान सराहनीय है। निःसन्देह उनकी साहित्यिक विचारधारा आज भी उतनी ही ग्राह्य है जितनी तत्कालीन युग में थी।

संदर्भ

1. डॉ. शिवाजी देवरे, कबीरदास, सृष्टि और दृष्टि, पृ. 126
2. डॉ. प्रणव शर्मा, प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य, पृ. 226
3. श्यामसुन्दरदास (सं.) कबीर ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी सभा, कांशी, पृ. 282
4. देस हरियाणा पत्रिका, मई–जून 2016, अंक 5, पृ. 36
5. श्रीमती सुधा, प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य, पृ. 187
6. डॉ. प्रणव शर्मा, प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य, पृ. 226
7. कबीर वाणी, पृ. 35